[2009] 12 एस.सी.आर. 583

महानगरीय परिवहन निगम

बनाम

वी. वेंकटेशन

(2009 की दीवानी अपील संख्या 5167)

7 अगस्त, 2009

[तरुण चटर्जी और आर.एम. लोढ़ा, न्यायमूर्तिगण]

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 : धारा 33 सी(2) — बकाया वेतन — सेवा से पृथक किए गए कर्मचारी की पुनर्नियुक्ति — सेवा समाप्ति की अवधि के दौरान कर्मचारी अधिवक्ता के रूप में नामांकित हुआ तथा पुनर्नियुक्ति की तिथि तक विधि व्यवसाय करता रहा — श्रम न्यायालय ने कर्मचारी के दावे को पूर्ण बकाया वेतन के रूप में ₹6.54 लाख तक स्वीकार किया — चुनौती — अभिनिर्धारित: कर्मचारी पूर्ण बकाया वेतन पाने का अधिकारी नहीं है — व्यवसाय से प्राप्त आय को लाभकारी रोजगार से प्राप्त आय माना जाएगा — बकाया वेतन निर्धारित करते समय युक्तिसंगत कटौती की जानी आवश्यक है — न्याय के हित में कर्मचारी को ₹6.54 लाख के स्थान पर ₹4 लाख बकाया वेतन प्रदान किया गया।

वर्तमान अपील में विचारणीय प्रश्न यह था कि क्या उत्तरदाता-कर्मचारी 12 दिसम्बर, 1996, अर्थात् जिस दिन उसे सेवा से हटाया गया था, से लेकर उसकी पुनर्नियुक्ति की तिथि 15 जून, 2004 तक पूर्ण बकाया वेतन का दावा करने का अधिकारी है, जबकि वह 12 दिसम्बर, 2000 को अधिवक्ता के रूप में नामांकित हो गया था और इस प्रकार लाभकारी रोजगार में संलग्न था।

अपील आंशिक रूप से स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया : 1.1. पुनर्नियुक्ति के साथ बकाया वेतन प्रदान किया जाना स्वतःस्फूर्त अधिकार नहीं है और किसी विशेष तथ्यात्मक परिस्थिति में, भले ही कर्मचारी की सेवा समाप्ति निर्धारित प्रक्रिया के प्रतिकूल पाई जाए, ऐसा अनुतोष पूर्णतः अनुपयुक्त भी हो सकता है। इस तथ्य को देखते हुए कि उत्तरदाता 12 दिसम्बर, 2000 को अधिवक्ता के रूप में नामांकित हुआ और पुनर्नियुक्ति (15 जून, 2004) तक उसी रूप में कार्य करता रहा, उसे पूर्ण बकाया वेतन का अधिकारी नहीं माना जा सकता। विधि व्यवसाय करते हुए उत्तरदाता द्वारा प्राप्त आय को लाभकारी रोजगार से प्राप्त आय माना जाएगा। लाभकारी रोजगार में स्व-रोजगार भी सम्मिलित होगा। [कंडिका 10 और 12] [593-सी; 594-ई-एफ]

यू.पी. राज्य पीतल उद्योग निगम बनाम उदय नारायण पाण्डेय, (2006) 1 एस.सी.सी. 479; *जे.के. सिंथेटिक्स लिमिटेड बनाम के.पी. अग्रवाल एवं अन्य,* (2007) 2 एस.सी.सी. 433; *हरियाणा रोडवेज के महाप्रबंधक बनाम रुधन सिंह,* (2005) 5 एस.सी.सी. 591; *एस.एम. सैयद बनाम बड़ौदा नगर निगम, बड़ौदा,* (1984) पूरक एस.सी.सी. 378; *जगबीर सिंह बनाम हरियाणा राज्य कृषि विपणन बोर्ड एवं अन्य,* जे.टी. (2009) 9 एस.सी. 396; *तथा उत्तर-पूर्व कर्नाटक सड़क परिवहन निगम बनाम एम. नागंगौड़ा,* (2007) 10 एस.सी.सी. 765, पर अवलंबन किया गया।

1.2. उत्तरदाता की ओर से यह प्रस्तुतिकरण स्वीकार करना कठिन है कि अधिवक्ता के रूप में उसकी कोई व्यावसायिक आय नहीं थी और अपने स्वयं के मामले की पैरवी करने के अतिरिक्त वह किसी अन्य मामले में उपस्थित नहीं हुआ। यह तथ्य कि पुनर्नियुक्ति के 2-3 वर्ष बाद उसने सेवा से त्यागपत्र दे दिया और पुनः विधि व्यवसाय में संलग्न हो गया, यह दर्शाता है कि 12 दिसम्बर, 2000 को सनद प्राप्त करने के बाद से 15 जून, 2004 तक उसने विधि व्यवसाय में कुछ न कुछ अभ्यास अवश्य किया था, अन्यथा वह स्थिर नौकरी छोड़कर पुनः अनिश्चितताओं से भरे इस व्यवसाय को नहीं अपनाता। इन परिस्थितियों में, यह आवश्यक है कि उत्तरदाता को देय पिछला वेतन निर्धारित करते समय युक्तिसंगत कटौती की

जाए। मामले के समग्र तथ्यों एवं परिस्थितियों तथा अन्य सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए, जिसमें यह तथ्य भी सम्मिलित है कि वह 12 दिसम्बर, 2000 से 15 जून, 2004 तक अधिवक्ता के रूप में नामांकित था, हमारे विचार में न्याय की मांग तभी पूरी होगी जब उत्तरदाता को ₹6,54,766/- के स्थान पर ₹4 लाख की राशि पिछला वेतन के रूप में प्रदान की जाए। [कंडिका 13] [594-जी; 595-ए-सी]

निर्णय-नजीर संदर्भ :

(2006) 1 एस.सी.सी. 479	**— पर अवलंबित है —**	**कंडिका 7**
(2007) 2 एस.सी.सी. 433	**— पर अवलंबित है —**	**कंडिका 8**
(2005) 5 एस.सी.सी. 591	**— पर अवलंबित है —**	**कंडिका 9**
(1984) पूरक एस.सी.सी. 378	**— पर अवलंबित है —**	**कंडिका 10**
जे.टी. (2009) 9 एस.सी. 396	**— पर अवलंबित है —**	**कंडिका 11**
(2007) 10 एस.सी.सी. 765	**— पर अवलंबित है —**	**कंडिका 12**

दीवानी अपीलीय अधिकारिता : 2009 की दीवानी अपील सं. 5167 ।

यह अपील 24.06.2008 को पारित उस निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध है, जो मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा विनिर्दिष्ट आदेश अपील सं. 682 सन् 2008 में पारित किया गया था।

अपीलकर्ताओं की ओर से — मोहन परासरन, अपर महाधिवक्ता, टी. हरिश कुमार, प्रशांत पी., वी. वासुदेवन।

उत्तरदाताओं की ओर से — के.वी. विश्वनाथन, पी.वी. योगेश्वरन।

न्यायालय का निर्णय प्रस्तुत किया गया —

आर.एम. लोढ़ा, न्यायमूर्ति 1. अनुमति प्रदान की जाती है।

2. इस विशेष अनुमति अपील में विचारणीय प्रश्न यह है : क्या उत्तरदाता 12 दिसम्बर, 1996 (जिस दिन उसे सेवा से हटाया गया) से लेकर 15 जून, 2004 (जिस दिन उसकी पुनर्नियुक्ति हुई) तक की अवधि के लिए पूर्ण बकाया वेतन का दावा करने का

अधिकारी है, जबकि वह 12 दिसम्बर, 2000 को अधिवक्ता के रूप में नामांकित हो चुका था और इस प्रकार लाभप्रद रोजगार में संलग्न था?

3. संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं। उत्तरदाता वी. वेंकटेशन को प्रारम्भ में 7 मई, 1980 को पल्लवन परिवहन निगम द्वारा परिचालक के रूप में नियुक्त किया गया था। बाद में महानगर परिवहन निगम (संक्षेप में "निगम") के गठन पर वह अपीलकर्ता निगम का कर्मचारी बन गया।

उत्तरदाता को निगम द्वारा कनिष्ठ सहायक तथा उसके पश्चात सहायक के पद पर पदोन्नत किया गया। ऐसा प्रतीत होता है कि उत्तरदाता ने विधि की उपाधि प्राप्त कर ली थी और उसे प्रशिक्षणार्थी के रूप में अधीक्षक (विधि) के पद के लिए चयनित किया गया। किन्तु प्रशिक्षण अवधि के दौरान उसका कार्य-निष्पादन संतोषजनक नहीं पाया गया और उसे पुनः सहायक के पद पर भेज दिया गया। 31 जनवरी, 1995 को उत्तरदाता का स्थानांतरण पूनामल्ली डिपो में कर दिया गया, किन्तु उसने वहाँ कार्यभार ग्रहण नहीं किया और बिना पूर्व अवकाश स्वीकृति अथवा सूचना के लगभग तीन माह तक अनुपस्थित रहा। निगम का मामला यह है कि 28 मार्च, 1995 को उत्तरदाता को आरोप-पत्र जारी किया गया, जिसके उत्तर में उसने लिखित स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया, किन्तु उसका उत्तर संतोषजनक नहीं पाया गया और उसके दुराचार की जांच हेतु विभागीय जांच प्रारम्भ की गई। बार-बार पत्रों एवं सूचनाओं, जिनमें स्थानीय समाचारपत्र में प्रकाशित सूचना भी सम्मिलित थी, के बावजूद उत्तरदाता विभागीय जांच में उपस्थित नहीं हुआ। अंततः 12 दिसम्बर, 1996 के आदेश द्वारा निगम ने उत्तरदाता को अपनी सेवा से हटा दिया।

4. उत्तरदाता ने औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33(2)(ख) के अंतर्गत औद्योगिक न्यायाधिकरण, चेन्नई के समक्ष एक परिवाद दायर किया और यह आरोप लगाया कि उसे सेवा से हटाते समय औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33क के प्रावधानों का उल्लंघन किया गया, जबकि सम्पूर्ण परिवहन कर्मचारियों से संबंधित औद्योगिक विवाद सं.

62/82 औद्योगिक न्यायाधिकरण, चेन्नई के समक्ष लंबित था। इस परिवाद का निगम द्वारा विभिन्न आधारों पर विरोध किया गया। औद्योगिक न्यायाधिकरण ने 11 जुलाई, 2003 के अपने आदेश द्वारा यह माना कि सेवा से हटाने का आदेश शून्य तथा अप्रभावी है, क्योंकि निगम ने स्वीकृति प्राप्त करने हेतु आवेदन नहीं किया था। औद्योगिक न्यायाधिकरण ने यह भी घोषित किया कि परिवादी को सेवा में निरंतर माना जाएगा तथा वह उपलब्ध सभी लाभों का अधिकारी होगा। निगम ने औद्योगिक न्यायाधिकरण द्वारा 11 जुलाई, 2003 को पारित आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी। प्रारम्भिक अंतरिम आदेश द्वारा उच्च न्यायालय ने 11 जुलाई, 2003 के आदेश पर स्थगन प्रदान किया, इस शर्त पर कि निगम औद्योगिक न्यायाधिकरण द्वारा निर्धारित सम्पूर्ण बकाया वेतन जमा करेगा तथा औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 17ख के प्रावधानों का अनुपालन करेगा। निगम ने उत्तरदाता को अंतिम आहरित वेतन का भुगतान करने के स्थान पर, लंबित विनिर्दिष्ट आदेश याचिका के अधिकारों को प्रभावित किए बिना, 15 जून, 2004 को उसे पुनः सेवा में बहाल कर दिया। उक्त विनिर्दिष्ट आदेश याचिका अंततः 30 अगस्त, 2006 को खारिज कर दी गई और इस प्रकार औद्योगिक न्यायाधिकरण द्वारा 11 जुलाई, 2003 को पारित आदेश अंतिम रूप से प्रभावी हो गया।

5. चूँकि 12 दिसम्बर, 1996 से 15 जून, 2004 तक की अवधि का बकाया वेतन निगम द्वारा भुगतान नहीं किया गया, इसलिए उत्तरदाता ने औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33ग(2) के अंतर्गत संबंधित श्रम न्यायालय का दरवाजा खटखटाया और निगम से देय एवं देयनीय राशि के रूप में ₹8,08,698/- की मांग की। निगम ने धारा 33ग(2) के अंतर्गत दायर आवेदन का विरोध किया। पक्षकारों को सुनने के पश्चात्, श्रम न्यायालय ने 22 दिसम्बर, 2006 के आदेश द्वारा उत्तरदाता के दावे को पूर्ण बकाया वेतन के रूप में ₹6,54,766/- तक स्वीकार कर लिया। निगम ने उक्त आदेश को मद्रास उच्च न्यायालय में विनिर्दिष्ट आदेश याचिका दायर कर चुनौती दी; मुख्य आधार यह था कि 12 दिसम्बर, 2000

को अधिवक्ता के रूप में नामांकन प्राप्त कर लेने के कारण उत्तरदाता लाभप्रद रोजगार में था और इसलिए वह बकाया वेतन का अधिकारी नहीं था। उत्तरदाता ने भी 22 दिसम्बर, 2006 के आदेश के प्रवर्तन की मांग करते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष एक विनिर्दिष्ट आदेश याचिका दायर की। निगम अपनी विनिर्दिष्ट आदेश याचिका में असफल रहा, जबकि उत्तरदाता द्वारा दायर विनिर्दिष्ट आदेश याचिका में विद्वान एकल न्यायाधीश ने श्रम विभाग को निगम से देय राशि की वसूली हेतु आवश्यक कदम उठाने का निर्देश दिया। निगम ने विद्वान एकल न्यायाधीश के उस आदेश को, जिसके द्वारा उसकी विनिर्दिष्ट आदेश याचिका खारिज कर दी गई थी, विनिर्दिष्ट आदेश अपील दायर कर चुनौती दी, किन्तु वह भी 24 जून, 2008 को खारिज कर दी गई, जिसके परिणामस्वरूप विशेष अनुमति द्वारा यह वर्तमान अपील दायर की गई।

6. उपर्युक्त वर्णित तथ्यों की पृष्ठभूमि में, अब हम ऊपर उल्लिखित प्रश्न का परीक्षण करते हैं।

7. उत्तर प्रदेश स्टेट ब्रासवेयर कॉरपोरेशन बनाम उदय नारायण पांडेय[1] में, इस न्यायालय ने इस प्रश्न पर विचार करते हुए कि क्या किसी कर्मचारी को, जिसे *उत्तर प्रदेश औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947* की धारा 6एन (जो औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25एफ के समतुल्य है) के प्रावधानों का उल्लंघन करके सेवामुक्त किया गया हो, पुनर्नियोजन के परिणामस्वरूप बकाया वेतन देने का निर्देश एक सामान्य नियम के रूप में उचित है, निम्नलिखित टिप्पणियाँ कीं—

"**41.** औद्योगिक न्यायालयों को, प्रबंधन और कर्मचारियों के मध्य विवादों का निर्णय करते समय, ऐसे निर्णय करने चाहिए जो उस उद्देश्य के अनुरूप हों जिसे कानून प्राप्त करना चाहता है। जब औद्योगिक विवाद अधिनियम के अंतर्गत न्यायनिर्णयन में न्याय ही मुख्य आधार है, तब उच्च

1 (2006) 1 एस.सी.सी. 479

न्यायालयों द्वारा उन्हें विधियों के कठोर शब्दों को यांत्रिक रूप से लागू करने के लिए बाध्य करना पूर्णतः अनुचित होगा। न्याय प्रदान करने का अर्थ यह भी है कि किसी व्यक्ति को वही दिया जाए जिसका वह वास्तव में अधिकारी है, न कि केवल वह जो विधि के अनुसार उसे दिया जा सकता है।

42. कोई व्यक्ति केवल इसलिए किसी वस्तु का अधिकारी नहीं हो जाता कि उसे देना विधिसम्मत है। यदि इस सिद्धांत को लागू किया जाए, तो औद्योगिक न्यायालयों के कार्यों का बहुत बड़ा महत्व समाप्त हो जाएगा।"

43. इस न्यायालय के बाद के निर्णयों द्वारा लाए गए परिवर्तन, सम्भवतः सरकार की नीतिगत निर्णयों में हुए परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए, जो प्रचलित बाज़ार अर्थव्यवस्था, वैश्वीकरण, निजीकरण तथा बाह्य स्रोतों से कार्य कराए जाने की पृष्ठभूमि में हुए, स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं।

44. ......

45. अतः न्यायालय ने इस बात पर बल दिया कि राहत प्रदान करते समय औद्योगिक न्यायालय द्वारा विचार-विमर्श करना अनिवार्य है। इसलिए पूर्ण बकाया वेतन का भुगतान स्वाभाविक परिणाम नहीं माना जा सकता।"

8. *जे.के. सिंथेटिक्स लिमिटेड बनाम के.पी. अग्रवाल एवं अन्य*[2] के मामले में, इस प्रश्न पर विचार करते हुए कि क्या कोई कर्मचारी सेवा समाप्ति की तिथि से पुनर्नियोजन की तिथि तक बकाया वेतन पाने का अधिकारी है, जबकि सेवा से बर्खास्तगी के दण्ड को कम दण्ड (दो वर्ष के लिए वेतनवृद्धि रोकना) से प्रतिस्थापित कर दिया गया हो, इस न्यायालय ने कहा—

"15. किन्तु जिस प्रकार 'बकाया वेतन' को देखा जाता है, उसमें पिछले दो दशकों में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है। अब इसे पुनर्नियोजन का स्वतः अथवा

2 (2007) 2 एस.सी.सी. 433

स्वाभाविक परिणाम नहीं माना जाता। हम इस प्रश्न पर दिए गए हाल के निर्णयों की श्रृंखला में से नवीनतम निर्णय का उल्लेख कर सकते हैं। *उत्तर प्रदेश स्टेट ब्रासवेयर कॉरपोरेशन लिमिटेड बनाम उदय नारायण पांडेय* [(2006) 1 एस.सी.सी. 479] में, इस न्यायालय ने *इलाहाबाद जल संस्थान बनाम दया शंकर राय* [(2005) 5 एस.सी.सी. 124] तथा *केन्द्रीय विद्यालय संगठन बनाम एस.सी. शर्मा* [(2005) 2 एस.सी.सी. 363] का अनुसरण करते हुए निम्नलिखित कहा : (*उदय नारायण पांडेय* प्रकरण, पृष्ठ 480, कंडिका (घ) से (छ)) :"

"कोई व्यक्ति केवल इसलिए किसी वस्तु का अधिकारी नहीं हो जाता कि उसे देना विधिसम्मत है। यदि इस सिद्धांत को लागू किया जाए, तो औद्योगिक न्यायालयों के कार्यों का बहुत बड़ा महत्व समाप्त हो जाएगा।

यद्यपि सेवा समाप्ति का आदेश अवैध घोषित किए जाने पर पूर्ण बकाया वेतन का भुगतान करने का निर्देश सामान्य परिणाम हुआ करता था, किन्तु अब समय के साथ न्यायालय इस विषय को व्यावहारिक दृष्टिकोण से देखने लगा है, यह समझते हुए कि किसी उद्योग को उस अवधि के लिए कर्मचारी को भुगतान करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता, जिस अवधि में उसने स्पष्टतः उसके लिए बहुत कम या बिल्कुल भी योगदान न दिया हो और/या वह अवधि अनुत्पादक रूप से व्यतीत हुई हो, जिसके परिणामस्वरूप नियोक्ता को अनेक वर्ष पूर्व की उस स्थिति में वापस जाना पड़े जब कर्मचारी की सेवा समाप्त की गई थी।सर्वोच्च न्यायालय के बाद के निर्णयों द्वारा लाए गए परिवर्तन, सम्भवतः सरकार की नीतिगत निर्णयों में हुए परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए, जो प्रचलित बाज़ार अर्थव्यवस्था, वैश्वीकरण, निजीकरण तथा

बाह्य स्रोतों से कार्य कराए जाने की पृष्ठभूमि में हुए, स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं।"

यह निर्धारित करने के लिए कोई निश्चित सूत्र निर्धारित नहीं किया जा सकता कि किन परिस्थितियों में सम्पूर्ण बकाया वेतन का भुगतान किया जाना चाहिए। निस्संदेह, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। किन्तु यह कहना सही नहीं होगा कि यह स्वतः प्राप्त होने वाला अधिकार है। इसे केवल इसलिए यांत्रिक रूप से प्रदान नहीं किया जाना चाहिए कि तकनीकी आधारों पर अथवा अन्यथा सेवा समाप्ति का आदेश, उत्तर प्रदेश औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 6-एन के प्रावधानों के विपरीत पाया गया हो। राहत प्रदान करते समय औद्योगिक न्यायालय द्वारा विवेकपूर्ण विचार करना अनिवार्य है। पूर्ण बकाया वेतन का भुगतान स्वाभाविक परिणाम नहीं माना जा सकता।"

जी.एम., हरियाणा रोडवेज बनाम रुधन सिंह (2005) 5 एस.सी.सी. 591 में इस न्यायालय ने यह कहा : (एस.सी.सी. पृष्ठ 596, कंडिका 8) :

"8. ऐसा कोई निश्चित नियम नहीं है कि प्रत्येक मामले में, जहाँ औद्योगिक न्यायाधिकरण यह निष्कर्ष निकाले कि सेवा समाप्ति अधिनियम की धारा 25- एफ का उल्लंघन करके की गई थी, वहाँ सम्पूर्ण बकाया वेतन प्रदान किया ही जाए। अनेक कारक, जैसे चयन और नियुक्ति की प्रक्रिया तथा तरीका, अर्थात् क्या रिक्ति का समुचित विज्ञापन प्रकाशित किया गया था अथवा रोजगार विनिमय से आवेदन आमंत्रित किए गए थे, नियुक्ति का स्वरूप, अर्थात् क्या वह तदर्थ, अल्पकालिक, दैनिक वेतनभोगी, अस्थायी या स्थायी प्रकृति की थी, कार्य के लिए किसी विशेष योग्यता की आवश्यकता थी या नहीं, इत्यादि बातों का मूल्यांकन और संतुलन करते हुए बकाया वेतन प्रदान

करने के संबंध में निर्णय लिया जाना चाहिए। महत्त्वपूर्ण कारकों में से एक, जिसे ध्यान में रखा जाना आवश्यक है, वह सेवा अवधि है जो कर्मचारी ने नियोक्ता के साथ व्यतीत की है। यदि कर्मचारी ने पर्याप्त अवधि तक सेवा दी हो और उसकी सेवाएँ गलत ढंग से समाप्त कर दी गई हों, तो उसकी आयु और उसके पास उपलब्ध योग्यताओं को ध्यान में रखते हुए, इस तथ्य को देखते हुए कि संभवतः वह अन्य रोजगार प्राप्त करने की स्थिति में न हो, उसे पूर्ण या आंशिक बकाया वेतन दिया जा सकता है।किन्तु जहाँ कर्मचारी द्वारा प्रदान की गई कुल सेवा अवधि बहुत कम हो, वहाँ सम्पूर्ण अवधि के लिए, अर्थात् सेवा समाप्ति की तिथि से निर्णय की तिथि तक, बकाया वेतन प्रदान करना — जो अनुभव से प्रायः बहुत लंबी अवधि होती है — पूर्णतः अनुपयुक्त होगा। एक अन्य महत्त्वपूर्ण कारक, जिस पर विचार किया जाना चाहिए, वह रोजगार की प्रकृति है। स्थायी प्रकृति की नियमित सेवा की तुलना अल्पकालिक अथवा अनियमित दैनिक वेतन आधारित रोजगार से नहीं की जा सकती, भले ही वह एक पंचांग वर्ष में 240 दिनों की हो।"

16. बकाया वेतन के संबंध में प्रमाण के भार को लेकर भी दृष्टिकोण में उल्लेखनीय परिवर्तन आया है। *केन्द्रीय विद्यालय संगठन* के मामले में इस न्यायालय ने कहा था : (एस.सी.सी. पृष्ठ 366, कंडिका 16)

"जब किसी व्यक्ति के बकाया वेतन पाने की पात्रता निर्धारित करने का प्रश्न हो, तब कर्मचारी को यह दिखाना होता है कि वह लाभकारी रोजगार में नहीं था। प्रारम्भिक भार उसी पर होता है। उसके बाद और यदि वह इस संबंध में सामग्री प्रस्तुत कर देता है, तब नियोक्ता उस दावे का खण्डन करने हेतु सामग्री अभिलेख पर ला सकता है। वर्तमान मामले में, प्रत्युत्तरदाता ने न तो ऐसा कोई अभिवचन किया और न ही इस संबंध में कोई सामग्री प्रस्तुत की।"

उत्तर प्रदेश राज्य पीतल उद्योग निगम लिमिटेड के मामले में इस न्यायालय ने कहा : (एस.सी.सी. पृष्ठ 495, कंडिका 61)

"61. यह विवादित नहीं है कि प्रत्युत्तरदाता ने अपने लिखित कथन में यह कोई अभिवचन नहीं किया कि उक्त अवधि के दौरान वह लाभकारी रोजगार में नहीं था। इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों से अब यह विधि स्थापित हो चुकी है कि यद्यपि पूर्व में यह न्यायालय इस बात पर बल देता था कि उक्त अभिवचन उठाना नियोक्ता का दायित्व है, किन्तु साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 अथवा उससे मिलते-जुलते प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए ऐसा अभिवचन कर्मचारी द्वारा ही किया जाना चाहिए।"

17. यह भी एक भ्रान्ति है कि जब भी पुनर्नियुक्ति का निर्देश दिया जाता है, तब "सेवा की निरन्तरता" और "परिणामी लाभ" स्वतः ही उसके साथ मिलने चाहिए। किसी ऐसे व्यक्ति को, जिसने 10 से 15 वर्षों तक कार्य नहीं किया हो और जिसके पास उच्च पदों के कर्तव्यों एवं कार्यों के निर्वहन के लिए आवश्यक अनुभव का लाभ भी न हो, "परिणामी लाभ" के रूप में अनेक पदोन्नतियाँ दे देने के विनाशकारी प्रभावों की कल्पना प्रायः नहीं की जाती, जबकि ऐसे लाभ स्वचालित रूप से प्रदान कर दिए जाते हैं। जब भी न्यायालय अथवा न्यायाधिकरण पुनर्नियुक्ति का निर्देश दें, उन्हें अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग करते हुए तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए कि क्या "सेवा की निरन्तरता" और/अथवा "परिणामी लाभ" भी दिए जाने चाहिए। इस संदर्भ में हम इस न्यायालय के *ए.पी. राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम एस. नरसगौड़ (2003) 2 एस.सी.सी. 212*, *ए.पी. राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम अब्दुल करीम (2005) 6 एस.सी.सी. 36* तथा *राजस्थान राज्य*

सड़क परिवहन निगम बनाम श्याम बिहारी लाल गुप्ता (2005) 7 एस.सी.सी. 406 के निर्णयों का उल्लेख कर सकते हैं।

18. बकाया वेतन के प्रश्न पर पुनः आते हुए, यदि न्यायालय यह आवश्यक समझे कि बकाया वेतन दिया जाना चाहिए, तब प्रश्न यह होगा कि बकाया वेतन पूर्ण रूप से दिया जाए अथवा केवल आंशिक रूप से (और यदि आंशिक रूप से, तो कितने प्रतिशत)। यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। संबंधित अवधि के दौरान कर्मचारी द्वारा वैकल्पिक रोजगार अथवा व्यवसाय से प्राप्त कोई भी आय, बकाया वेतन प्रदान करते समय विचारणीय प्रासंगिक कारक है, इसके अतिरिक्त *रुधन सिंह* तथा *उदय नारायण पाण्डेय* के मामलों में उल्लिखित अन्य अनेक कारकों के साथ। इसलिए यह आवश्यक है कि कर्मचारी यह अभिवचन करे कि सेवा समाप्ति की तिथि से वह लाभकारी रोजगार में नहीं था। यद्यपि किसी कर्मचारी से नकारात्मक तथ्य सिद्ध करने की अपेक्षा नहीं की जा सकती, फिर भी उसे कम-से-कम शपथपूर्वक यह कथन करना होगा कि वह न तो कहीं नियोजित था और न ही किसी लाभकारी व्यापार अथवा उपक्रम में संलग्न था तथा उसकी कोई आय नहीं थी। तब प्रमाण का भार नियोक्ता पर स्थानांतरित हो जाएगा। किन्तु, सेवा से पृथक किए गए कर्मचारी पर यह कोई दायित्व नहीं है कि वह वैकल्पिक रोजगार खोजे अथवा प्राप्त करे। फिर भी स्थिति जो भी हो।"

9. जे.के. सिंथेटिक्स लिमिटेड के मामले में न्यायालय ने *उत्तर प्रदेश राज्य पीतल उद्योग निगम* तथा *महाप्रबंधक, हरियाणा रोडवेज बनाम रुधन सिंह*[3] के मामलों पर व्यापक विचार किया। विशेष रूप से यह कहा गया कि संबंधित अवधि के दौरान कर्मचारी द्वारा वैकल्पिक रोजगार अथवा व्यवसाय से

---

3 (2005) 5 एस.सी.सी. 591

प्राप्त कोई भी आय, बकाया वेतन प्रदान करते समय अन्य अनेक कारकों के अतिरिक्त एक प्रासंगिक विचारणीय कारक है।

10. उत्तरदाता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने यद्यपि इस तथ्य का विवाद नहीं किया कि उत्तरदाता 12 दिसम्बर, 2000 को अधिवक्ता के रूप में नामांकित हुआ था और पुनर्नियुक्ति की तिथि तक उसी रूप में बना रहा, किन्तु उन्होंने यह प्रस्तुत किया कि उत्तरदाता की विधि व्यवसाय से कोई आय नहीं थी और इसलिए बकाया वेतन से कोई राशि नहीं घटाई जानी चाहिए। इस संबंध में उन्होंने इस न्यायालय के निर्णय *एस. एम. सैय्यद बनाम बड़ौदा नगर निगम, बड़ौदा* पर भरोसा किया, जिसमें इस न्यायालय ने कहा था :

> "**6.** अपीलकर्ता ने आवश्यक शैक्षणिक योग्यता प्राप्त करने के पश्चात 20 जनवरी, 1972 को अधिवक्ता के रूप में नामांकन कराया। हमें बताया गया कि अपीलकर्ता ने स्वीकार किया था कि विधि व्यवसाय प्रारम्भ करने के बाद से वह ₹150 प्रति माह अर्जित कर रहा था। इसलिए यह तर्क दिया गया कि 20 जनवरी, 1972 से 26 अक्टूबर, 1976 तक की अवधि के लिए कोई बकाया वेतन नहीं दिया जाना चाहिए। हम इससे प्रभावित नहीं हैं। निस्संदेह उत्तरदाता उस राशि को घटाने का अधिकारी होगा जिसे अपीलकर्ता द्वारा अर्जित किया जाना स्वीकार किया गया है और जो बकाया वेतन के रूप में देय है। प्रश्न यह है कि ₹150 प्रति माह की दर से कटौती किस तिथि से की जाए।
>
> **7.** अपीलकर्ता ने यह तर्क दिया और हमारे मत में सही तर्क दिया कि ₹150 प्रति माह की दर से कटौती उसी दिन से प्रारम्भ नहीं होनी चाहिए जिस दिन वह अधिवक्ता के रूप में नामांकित हुआ, क्योंकि यह

सामान्य जानकारी की बात है कि कोई भी व्यक्ति पहले ही दिन से आय अर्जित नहीं करता और इसलिए व्यवसाय में पैर जमाने के लिए एक युक्तिसंगत अवधि अलग रखी जानी चाहिए। यह तर्क विचारणीय है। स्वयं अपीलकर्ता का कथन कुछ शिथिल रहा है। यह मानना उचित होगा कि अधिवक्ता के रूप में नामांकन की तिथि से कम-से-कम एक वर्ष बीत जाने के बाद ही उसने, जैसा कि उसने स्वयं कहा, ₹150 प्रति माह की दर से अर्जन प्रारम्भ किया होगा।"

11. प्रथम, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि सत्तर और अस्सी के दशक में, यदि बर्खास्तगी का आदेश अवैध पाया जाता था, तो पुनर्नियुक्ति और पूर्ण बकाया वेतन देने का निर्देश सामान्यतः स्वाभाविक परिणाम के रूप में दिया जाता था। किन्तु अब विधिक दृष्टिकोण में परिवर्तन आ गया है। हाल ही में हमने *जगबीर सिंह बनाम हरियाणा राज्य कृषि विपणन बोर्ड एवं अन्य*[4] के मामले में यह कहा था कि हाल के समय में विधिक स्थिति में परिवर्तन हुआ है और अनेक निर्णयों की श्रृंखला में इस न्यायालय ने निरंतर यह दृष्टिकोण अपनाया है कि पुनर्नियुक्ति के साथ बकाया वेतन प्रदान करने का अनुतोष स्वचालित नहीं है और किसी विशेष तथ्यात्मक परिस्थिति में पूर्णतः अनुपयुक्त भी हो सकता है, भले ही कर्मचारी की सेवा समाप्ति निर्धारित प्रक्रिया के उल्लंघन में की गई हो।

12. द्वितीय, और इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह है कि इस तथ्य को देखते हुए कि उत्तरदाता 12 दिसम्बर, 2000 को अधिवक्ता के रूप में नामांकित हुआ था और पुनर्नियुक्ति की तिथि (15 जून, 2004) तक उसी रूप में बना रहा, हमारे विचारपूर्ण मत में उसे पूर्ण बकाया वेतन का अधिकारी नहीं माना

---

4 जे.टी. 2009 (9) एस.सी. 396.

जा सकता। इस बात में कोई संदेह नहीं हो सकता कि उत्तरदाता द्वारा विधि व्यवसाय करते समय प्राप्त आय को लाभकारी रोजगार से प्राप्त आय माना जाएगा। *नॉर्थ ईस्ट कर्नाटक सड़क परिवहन निगम बनाम एम. नागंगौड़ा*[5] के मामले में इस न्यायालय ने यह माना था कि "लाभकारी रोजगार" में स्वरोजगार भी सम्मिलित होगा। हम आदरपूर्वक इस मत से सहमत हैं।

13. उत्तरदाता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता की इस दलील को स्वीकार करना कठिन है कि अधिवक्ता के रूप में उसकी कोई व्यावसायिक आय नहीं थी और अपने स्वयं के मामले की पैरवी करने के अतिरिक्त उत्तरदाता किसी अन्य मामले में उपस्थित नहीं हुआ। यह तथ्य कि पुनर्नियुक्ति के 2-3 वर्ष पश्चात उसने सेवा से त्यागपत्र दे दिया और पुनः विधि व्यवसाय में संलग्न हो गया, हमें यह मानने के लिए प्रेरित करता है कि 12 दिसम्बर, 2000 को सनद प्राप्त करने के पश्चात से 15 जून, 2004 तक उसकी विधि व्यवसाय में कुछ न कुछ प्रैक्टिस अवश्य रही होगी; अन्यथा वह स्थिर नौकरी छोड़कर पुनः अनिश्चितताओं से भरे व्यवसाय को नहीं अपनाता। इस दृष्टि से, उत्तरदाता को देय बकाया वेतन निर्धारित करते समय युक्तिसंगत कटौती किया जाना आवश्यक है। मामले के समस्त तथ्यों एवं परिस्थितियों तथा अन्य सभी पहलुओं, जिनमें यह तथ्य भी सम्मिलित है कि वह 12 दिसम्बर, 2000 से 15 जून, 2004 तक अधिवक्ता के रूप में नामांकित था, को ध्यान में रखते हुए, हमारे विचार में न्याय की मांग तभी पूर्ण होगी जब उत्तरदाता को ₹6,54,766/- के स्थान पर ₹4 लाख की राशि बकाया वेतन के रूप में प्रदान की जाए। हम तदनुसार आदेश देते हैं।

---

5 2007) 10 एस.सी.सी. 765

14. अतः, उपर्युक्त सीमा तक यह अपील स्वीकार की जाती है। खंडपीठ तथा विद्वान एकल न्यायाधीश के विवादित निर्णय तदनुसार संशोधित किए जाते हैं। निगम को उत्तरदाता को ₹4 लाख की राशि का भुगतान करने के लिए आठ सप्ताह का समय प्रदान किया जाता है, यदि अब तक भुगतान नहीं किया गया हो। ऐसा न करने की स्थिति में, उक्त राशि पर 15 जून, 2004 से भुगतान की तिथि तक 6 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से साधारण ब्याज देय होगा। पक्षकार अपने-अपने व्यय स्वयं वहन करेंगे।

डी.जी. अपील आंशिक रूप से स्वीकृत।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।